International Journal on Science and Technology (IJSAT)
E-ISSN: 2229-7677 ● Website: www.ijsat.org ● Email: editor@ijsat.org

दक्षिण एशिया में नागरिक अधिकारों का विकास :संवैधानिक दृष्टिकोण से

अमित कुमार[1], प्रोफेसर प्रीति पाठक[2]

[1]शोधार्थी, [2]शोध पर्यवेक्षक- विभागाध्यक्ष

[1, 2]राजनीति विज्ञान, साहू रामस्वरूप महिला महाविद्यालय बरेली (उत्तर प्रदेश)

महात्मा ज्योतिबा फूले रोहिलखंड विश्वविद्यालय (उत्तर प्रदेश)

सारांश

दक्षिण एशिया में नागरिक अधिकारों का विकास एक जटिल और गतिशील प्रक्रिया है, जो विविध ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संदर्भों द्वारा आकार लेती है। यह शोध पत्र संवैधानिक दृष्टिकोण से दक्षिण एशिया में नागरिक अधिकारों के विकासकी जांच करता है, कानूनी ढाँचों और न्यायिक व्याख्याओं पर ध्यान केंद्रित करता है, जिन्होंने पूरे क्षेत्र में व्यक्तिगत स्वतंत्रता, समानता और न्याय को आकार दिया है। भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान और मालदीव को शामिल करते हुए दक्षिण एशिया एक अनूठा संवैधानिक परिदृश्य प्रस्तुत करता है जो औपनिवेशिक विरासत, स्वतंत्रता के बाद के राष्ट्र निर्माण प्रयासों और नागरिक अधिकारों के संरक्षण और विस्तार में समकालीन चुनौतियों को दर्शाता है। यह पत्र प्रमुख संवैधानिक विकास, ऐतिहासिक न्यायिक निर्णयों और राजनीतिक आंदोलनों की भूमिका के माध्यम से दक्षिण एशिया में नागरिक अधिकारों के इतिहास का पता लगाता है, यह पता लगाता है कि संवैधानिक ग्रंथों और व्याख्याओं ने ऐतिहासिक रूप से हाशिए पर पड़े समूहों के लिए नागरिक अधिकारों की प्राप्ति को किस सीमातक बढ़ावा दिया है या बाधित किया है। अध्ययन नागरिक स्वतंत्रता की सुरक्षा में संवैधानिक ढांचे के महत्व पर जोर देता है, साथ ही सत्तावाद, धार्मिक कट्टरवाद, जाति-आधारित भेदभाव और जातीय संघर्षों द्वारा उत्पन्न चुनौतियों पर भी विचार करता है। संवैधानिक प्रावधानों, केस लॉ और सामाजिक-राजनीतिक गतिशीलता का विश्लेषण करके, यह पेपर दक्षिण एशिया में नागरिक अधिकारों के विकास की व्यापक समझ प्रदान करता है।

यह शोधपत्र दक्षिण एशिया में मानवाधिकारों के विकास की जाँचकरता है। यह विशेष रूप से प्रत्येक दक्षिण एशियाई राज्य में मानवाधिकारों के विकास का अध्ययन करता है। इसके अलावा, यह शोधपत्र

दक्षिण एशिया में मानवाधिकारों के विकास की धीमी गति के पीछे संभावित कारण कारकों का विश्लेषण करता है, साथ ही क्षेत्रीय मानवाधिकार साधन विकसित करने में विफलता का भी विश्लेषण करता है।

मुख्य शब्द :नागरिक अधिकार,मौलिक अधिकार,धर्म,राष्ट्रवाद,दक्षिण एशिया

परिचय

"मानव और नागरिक अधिकारों को राष्ट्रीय या अंतर्राष्ट्रीय कानूनों, घोषणाओं, सम्मेलनों या मानकों द्वारा मान्यता प्राप्त है। इन अधिकारों में जीवन का अधिकार; स्वतंत्रता; समानता; भाषण, सभा और याचिका; गरिमा; आत्मनिर्णय; स्वायत्तता; परिवार और प्रजनन; न्याय; सामुदायिक भागीदारी; संपत्ति और वित्त; स्वास्थ्य; कल्याण; मतदान; अवसर की समानताऔर विकल्पशामिल है। इनमें अनुचित और अनुचित रूप से व्यापक संरक्षकता या संरक्षकता, प्रतिबंध, एकांतवास और प्रतिकूल व्यवहार से स्वतंत्रता भी शामिल है।"(1)

मानवाधिकार वे अंतर्निहित अधिकार या हक हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को मानव समाज का सदस्य होने के नाते प्राप्त होते हैं। ये अधिकार सभी के हैं, चाहे उनकी जाति, लिंग, राष्ट्रीयता, जातीयता, भाषा, धर्म या कोई अन्य स्थिति कुछ भी हो।राज्यों का यह परम कर्तव्य है कि वे अपने लोगों को इन अधिकारों की गारंटी दें और उनकी रक्षा करें। इस प्रकार, वे इन अधिकारों का सम्मान करने, उनकी रक्षा करने, उन्हें बढ़ावा देने और उन्हें पूरा करने के लिए क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सहयोग करते हैं। इस तरह के सहयोग को क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मंचों और साधनोंमें प्रोत्साहित किया गया है क्योंकि सभी राज्य दूसरे राज्य की सहायता के बिना अपने दम पर इन अधिकारों की रक्षा नहीं कर सकते।

दक्षिण एशिया, धर्म, जातीयता, भाषा और संस्कृति के संदर्भ में अपनी अपार विविधता से परिभाषित एक क्षेत्र है, जिसने पिछली शताब्दी में महत्वपूर्ण राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तन किए हैं। नागरिक अधिकारों की सुरक्षा और विस्तार की दिशा में इस क्षेत्र की यात्रा इसके औपनिवेशिक अतीत, स्वतंत्रता के लिए संघर्ष और आधुनिक राष्ट्र-राज्यों के गठन से अटूट रूप से जुड़ी हुई है। नागरिक अधिकारों का विकास अलग-अलग देशों के संविधानों से गहराई से प्रभावित हुआ है, जो व्यक्तिगत स्वतंत्रता और समानता की सुरक्षा के लिए एक रूपरेखा प्रदान करते हैं। हालाँकि, इन अधिकारों की प्राप्ति असमान रही है, जिसमें विभिन्न राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक कारक संवैधानिक वादों के व्यावहारिक कार्यान्वयन को आकार देते हैं।

दक्षिण एशिया में नागरिक अधिकारों की अवधारणा व्यक्तिगत स्वतंत्रता, कानून के समक्ष समानता और भेदभाव से सुरक्षा के विचारों में निहित है। फिर भी, इन अधिकारों की प्राप्ति औपनिवेशिक विरासत,

जाति और जातीय पदानुक्रम की निरंतरता, लिंग आधारित असमानताओं और धार्मिक असहिष्णुता जैसे कारकों से बाधित रही है। साथ ही, संवैधानिक प्रावधानों और न्यायिक निर्णयों ने नागरिक अधिकारों के विस्तार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, खासकर स्वतंत्रता के बाद के दक्षिण एशिया में। यह लेख संवैधानिक कानून के लेंस के माध्यम से क्षेत्र में नागरिक अधिकारों के विकास का पता लगाएगा, जिसमें प्रमुख दक्षिण एशियाई देशों-भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान और मालदीव के कानूनी ढाँचों का विश्लेषण किया जाएगा, जो नागरिक स्वतंत्रता, समानता और न्याय की सुरक्षा पर ध्यान केंद्रित करेगा।

औपनिवेशिक विरासत और संवैधानिक नींव

दक्षिण एशिया के औपनिवेशिक इतिहास का इस क्षेत्र में नागरिक अधिकारों के विकास पर गहरा प्रभाव पड़ा है। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के दौरान, दक्षिण एशियाई देशों में कानूनी व्यवस्था ब्रिटिश सामान्य कानून पर आधारित थी, और औपनिवेशिक प्रशासन ने जनता के कानूनी और राजनीतिक अधिकारों पर महत्वपूर्ण नियंत्रण रखा। औपनिवेशिक राज्य ने शासन की एक पदानुक्रमित प्रणाली लागू की जिसने धर्म, जाति, जातीयता और लिंग के आधार पर असमानताओं को मजबूत किया।

जबकि अंग्रेजों ने व्यक्तिगत अधिकार और व्यक्तिगत स्वतंत्रता जैसी कानूनी अवधारणाएँ पेश कीं, ये काफी हद तक सीमित, विशेषाधिकार प्राप्त लोगों के समूह तक ही सीमित थीं। अधिकांश आबादी, विशेष रूप से हाशिए के समुदायों (जैसे दलित, महिलाएँ और स्वदेशी समूह) के लोगों की कानूनी सुरक्षा और नागरिक स्वतंत्रता तक सीमित पहुँच थी।

1. **भारत**: ब्रिटिश शासन के तहत, भारतीय उपमहाद्वीप औपनिवेशिक कानूनों की एक श्रृंखला द्वारा शासित था, जिन्हें ब्रिटिश अधिकार और नियंत्रण बनाए रखने के लिए डिज़ाइन किया गया था। "मौलिक अधिकारों की पहली मांग 1895 में "भारतीय संविधान विधेयक" के रूप में आई। इसे स्वराज विधेयक 1895 के नाम से भी जाना जाता है, इसे भारतीय राष्ट्रवाद के उदय और भारतीयों द्वारा स्वशासन की बढ़ती मुखर मांगों के दौरान लिखा गया था। इसमें अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, निजता के अधिकार, मताधिकार के अधिकार आदि के बारे में बात की गई थी।"[(2)] भारत सरकार अधिनियम (1935) औपनिवेशिक युग में सबसे महत्वपूर्ण कानूनों में से एक था, जिसने सीमित स्वशासन और संवैधानिक विकास के लिए एक रूपरेखा स्थापित की। हालाँकि, अधिनियम ने अभी भी नागरिक अधिकारों पर महत्वपूर्ण प्रतिबंध लगाए और हाशिए के समूहों के लिए सार्वभौमिक मताधिकार या सुरक्षा प्रदान करने में विफल रहा।

2. **पाकिस्तान और बांग्लादेश**: पाकिस्तान और बांग्लादेश, जो क्रमशः 1947 और 1971 में स्वतंत्रता से पहले ब्रिटिश भारत का हिस्सा थे, ने ब्रिटिश कानूनी प्रणाली विरासत में प्राप्त की। भारत की तरह, दोनों देशों को नागरिक अधिकारों और सामाजिक न्याय के सवालों से जूझते हुए एक औपनिवेशिक प्रणाली से एक संप्रभु राष्ट्र-राज्य में संक्रमण की चुनौती का सामना करना पड़ा।
3. **श्रीलंका**: औपनिवेशिक काल से पहले, श्रीलंका एक राजशाही था। इसके बाद पुर्तगाली, डच और ब्रिटिश शासकों के अधीन प्रशासनिक और सरकारी सुधार पेश किए गए। कोलब्रुक-कैमरून आयोग की सिफारिशों के अनुसार, कार्यकारी परिषद और विधान परिषद- औपनिवेशिक सीलोन के पहले विधायी निकाय - गवर्नर सर रॉबर्ट हॉर्टन द्वारा 1833 में स्थापित किए गए थे। 1931 में सार्वभौमिक मताधिकार प्रदान किया गया था। श्रीलंका (तब सीलोन) को ब्रिटिश औपनिवेशिक कानूनी प्रणाली भी विरासत में मिली, जिसने देश को महत्वपूर्ण सामाजिक विभाजनों, विशेष रूप से जातीय आधार पर छोड़ दिया। औपनिवेशिक शासन के दौरान सीमित सुधारों की शुरूआत के बावजूद, नागरिक अधिकार अभी भी काफी हद तक अभिजात वर्ग तक ही सीमित थे।

स्वतंत्रता के बाद संवैधानिक रूपरेखा और नागरिक अधिकार संरक्षण

"दक्षिण एशियाई देशों में मानवाधिकार कार्यकर्ता लंबे समय से आम चिंता के कई मुद्दों पर सामूहिक तंत्र विकसित करने की अवधारणा का समर्थन करते रहे हैं, खासकर इस तथ्य के मद्देनजर कि कई मानवाधिकार मुद्दे द्विपक्षीय और क्षेत्रीय समाधान की मांग करते हैं। इस जरूरत को पहचानते हुए भारत से श्री आई के गुजराल, बांग्लादेश से डॉ. कमल हुसैन, नेपाल से डॉ. देवेंद्र राज पांडे, श्रीलंका से सुश्री राधिका कुमारस्वामी और पाकिस्तान से सुश्री अस्मा जहांगीर की पांच सदस्यीय समिति ने मानवाधिकारों पर दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय पहल की संभावना पर चर्चा की। यह सुनिश्चित करने के लिए कि प्रस्तावित पहल को दक्षिण एशिया के सभी देशों में व्यापक समर्थन मिले, लगभग 100 लोगों का एक सम्मेलन आयोजित करने का निर्णय लिया गया। प्रतिनिधि मान्यता प्राप्त मानवाधिकार संगठनों से लिए गए थे और उनमें न्यायविद, शिक्षाविद, सार्वजनिक हस्तियां, मीडियाकर्मी आदि शामिल थे यह सम्मेलन 21-22 जुलाई, 2000 को भारत के राजस्थान के नीमराणा किले में आयोजित किया गया था। व्यापक विचार-विमर्श के बाद, उन्होंने नीमराणा घोषणा को अपनाया और दक्षिण एशियाई मानवाधिकार (SAHR) शीर्षक के तहत एक संगठन स्थापित करने का निर्णय लिया।"[(3)]

"नीमराना घोषणा पत्र में अपने गए प्रमुख तथ्य सिद्धांत:

- हमारे क्षेत्र में प्रत्येक व्यक्ति के अविभाज्य मानवाधिकारों और सम्मान में हमारे विश्वास की पुष्टि करते हुए।

- दक्षिण एशिया में मानवाधिकारों की गंभीर स्थिति को पहचानते हुए, जिसमें लगातार गरीबी, अभाव, निरक्षरता, असमानता, जाति और सामाजिक पदानुक्रम, महिलाओं के खिलाफ भेदभाव और बच्चों का शोषण जैसी भयानक विरासत है, जो हिंसा और राज्य दमन के बीच सत्तावादी, सैन्यवादी और सांप्रदायिक प्रवृत्तियों से और भी बढ़ गई है;
- असमान वैश्वीकरण और अभिजात्य घरेलू नीतियों के माध्यम से मानवाधिकारों पर अतिक्रमण से चिंतित हैं जो कामकाजी लोगों के हितों और उनके अस्तित्व, सुरक्षा और सम्मान के साथ जीवन जीने के अधिकार को नुकसान पहुंचाते हैं;
- दक्षिण एशिया में विविध समुदायों, भाषाई और जातीय समूहों, स्वदेशी लोगों (आदिवासियों और जनजातियों) और समाज के सामाजिक और आर्थिक रूप से वंचित वर्गों के अस्तित्व को मान्यता देना; और कई वर्गों के खिलाफ व्यापक भेदभाव;
- यह स्वीकार करते हुए कि एक देश में मानवाधिकारों का उल्लंघन अक्सर क्षेत्र के अन्य देशों में फैल जाता है और संभावित रूप से द्विपक्षीय/क्षेत्रीय तनाव और शत्रुता पैदा करता है, जिससे शांति को खतरा होता है।"[(4)]

स्वतंत्रता के बाद उभरे दक्षिण एशियाई देशों के संविधानों में लोकतांत्रिक शासन स्थापित करने और नागरिक अधिकारों की रक्षा करने की आकांक्षाएँ परिलक्षित हुईं। हालाँकि, इन आकांक्षाओं को किस हद तक साकार किया गया, यह प्रत्येक देश में राजनीतिक और सामाजिक संदर्भों के आधार पर काफी भिन्न था।

भारत: संवैधानिक लोकतंत्र का जन्म

1947 में भारत की स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान का मसौदा तैयार किया गया, जो 1950 में लागू हुआ। भारतीय संविधान दुनिया के सबसे लंबे और सबसे विस्तृत संविधानों में से एक है, जिसमें नागरिक अधिकारों, स्वतंत्रता और सामाजिक न्याय की रक्षा करने वाले व्यापक प्रावधान हैं। संविधान का ढांचा कई प्रमुख सिद्धांतों के इर्द-गिर्द बना है, जिनमें शामिल हैं:

1. **मौलिक अधिकार**: भारतीय संविधान का भाग III मौलिक अधिकारों की एक विस्तृत श्रृंखला की गारंटी देता है, जिसमें समानता का अधिकार (अनुच्छेद 14), भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता (अनुच्छेद 19), जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 21), और धर्म, नस्ल, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव के खिलाफ सुरक्षा (अनुच्छेद 15) शामिल हैं। इन अधिकारों ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा और समानता को बढ़ावा देने के उद्देश्य से एक कानूनी ढांचे की नींव रखी।

2. **राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत**: संविधान के भाग IV में निर्देशक सिद्धांत शामिल हैं, जो सामाजिक और आर्थिक न्याय प्राप्त करने में सरकार का मार्गदर्शन करते हैं, हालाँकि वे कानूनी रूप से लागू करने योग्य नहीं हैं। इन सिद्धांतों ने सामाजिक अधिकारों को सुरक्षित करने के महत्व पर जोर दिया, जैसे कि काम करने का अधिकार, शिक्षा और पर्याप्त जीवन स्थितियों का अधिकार।
3. **न्यायिक सक्रियता**: भारतीय न्यायपालिका ने न्यायिक सक्रियता के माध्यम से नागरिक अधिकारों के विस्तार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मेनका गांधी बनाम भारत संघ (1978), जिसने जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार के दायरे का विस्तार किया, और केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973), जिसने मूल संरचना सिद्धांत को बरकरार रखा, जैसे ऐतिहासिक निर्णयों ने भारत में नागरिक अधिकारों की व्याख्या को काफी हद तक व्यापक बना दिया है।

इन संवैधानिक सुरक्षा उपायों के बावजूद, जाति-आधारित भेदभाव, लैंगिक असमानता, धार्मिक असहिष्णुता और क्षेत्रीय असमानताओं सहित चुनौतियाँ बनी हुई हैं। नागरिक अधिकारों की सुरक्षा अक्सर सरकार की राजनीतिक इच्छाशक्ति और न्यायपालिका की स्वतंत्रता पर निर्भर करती है।

पाकिस्तान: नागरिक अधिकारों का एक जटिल विकास

1956 में अपनाए गए पाकिस्तान के संविधान में कई संशोधन हुए हैं, जो देश की राजनीतिक अस्थिरता और बदलती प्राथमिकताओं को दर्शाते हैं। पाकिस्तान का संविधान समानता के अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और भेदभाव से सुरक्षा सहित मौलिक अधिकारों की गारंटी देता है। हालाँकि, पाकिस्तान के सैन्य शासन के इतिहास और राजनीति में धार्मिक और जातीय पहचान के प्रभुत्व ने इन अधिकारों की प्राप्ति पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है।

1. **इस्लामी पहचान**: पाकिस्तान का संविधान स्पष्ट रूप से इस्लाम को राज्य धर्म घोषित करता है और यह प्रावधान करता है कि कोई भी कानून इस्लामी सिद्धांतों का खंडन नहीं कर सकता। इससे धर्मनिरपेक्ष और धार्मिक ताकतों के बीच तनाव पैदा हुआ है और कई बार, नागरिक अधिकारों को धार्मिक कानूनों के अधीन कर दिया गया है, खासकर हिंदू, ईसाई और अहमदिया जैसे धार्मिक अल्पसंख्यकों के मामले में।
2. **न्यायिक चुनौतियाँ**: पाकिस्तानी न्यायपालिका ने नागरिक अधिकारों के विकास में एक जटिल भूमिका निभाई है। जबकि नागरिक स्वतंत्रता की पुष्टि करने वाले महत्वपूर्ण निर्णय हुए हैं, जैसे कि ज़फ़र अली शाह बनाम फ़ेडरेशनऑफ़ पाकिस्तान (2000) मामला, न्यायपालिका

अक्सर सेना के अधिकार को बनाए रखने में मिलीभगत रही है, और राज्य की नीतियों द्वारा हाशिए पर पड़े समूहों के अधिकारों को अक्सर कमज़ोर किया गया है।

बांग्लादेश: राजनीतिक उथल-पुथल के बीच अधिकारों के लिए प्रयास

बांग्लादेश, जिसने 1971 में स्वतंत्रता प्राप्त की, ने उसी वर्ष अपना पहला संविधान अपनाया। संविधान भारत और पाकिस्तान के समान मौलिक अधिकारों की गारंटी देता है, जिसमें समानता का अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और अल्पसंख्यकों की सुरक्षा शामिल है। हालाँकि, राजनीतिक अस्थिरता और लगातार सैन्य हस्तक्षेप ने नागरिक अधिकारों की पूर्ण प्राप्ति में बाधा डाली है।

1. **जातीय और धार्मिक अल्पसंख्यक**: संविधान में धार्मिक और जातीय अल्पसंख्यकों की सुरक्षा सुनिश्चित की गई है, लेकिन व्यवहार में, धार्मिक और जातीय तनाव कायम रहे हैं, खासकर हिंदू, स्वदेशी और अन्य अल्पसंख्यक समूहों के उपचार के संबंध में।

2. **न्यायिक निरीक्षण**: भारत की तरह, बांग्लादेश में भी नागरिक अधिकारों को बनाए रखने में न्यायिक सक्रियता का इतिहास रहा है। बांग्लादेश नेशनल वूमेनलॉयर्स एसोसिएशन बनाम बांग्लादेश सरकार (2003) मामला, जो पारिवारिक कानून के संदर्भ में महिलाओं के अधिकारों से निपटता है, नागरिक अधिकारों के विस्तार में न्यायपालिका की भूमिका का एक उदाहरण है। हालाँकि, राजनीतिक हस्तक्षेप ने अक्सर न्यायपालिका की अधिकारों की लगातार रक्षा करने की क्षमता को बाधित किया है।

श्रीलंका, नेपाल, भूटान और मालदीव

इनमें से प्रत्येक देश में नागरिक अधिकारों के लिए अद्वितीय संवैधानिक प्रावधान हैं, जो उनके विशिष्ट राजनीतिक और सांस्कृतिक संदर्भों को दर्शाते हैं।

1. **श्रीलंका**: श्रीलंका का संविधान नागरिक अधिकारों की गारंटी देता है, लेकिन सिंहलीबहुसंख्यकों और तमिल अल्पसंख्यकों के बीच जातीय संघर्षों से जूझता रहा है। समानता और गैर-भेदभाव की गारंटी के बावजूद, जातीय अल्पसंख्यकों के नागरिक अधिकारों को गृहयुद्ध और युद्ध के बाद की नीतियों द्वारा समझौता किया गया है। "श्रीलंका सभी सात प्रमुख अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार उपकरणों और कई वैकल्पिक प्रोटोकॉल का एक पक्ष बन गया है।"[5]श्रीलंका के संविधान की प्रस्तावना "सभी लोगों को स्वतंत्रता, समानता, न्याय, मौलिक मानवाधिकार और न्यायपालिका की स्वतंत्रता का आश्वासन देती है, जो अमूर्त विरासत के रूप में श्रीलंका के लोगों

की आने वाली पीढ़ियों और दुनिया के सभी लोगों की गरिमा और कल्याण की गारंटी देती है" जो "न्यायपूर्ण और स्वतंत्र समाज के निर्माण और संरक्षण" के लिए प्रयास करते हैं।

2. **नेपाल**: नेपाल साम्राज्य का संविधान 1990 जाति, पंथ, धर्म, नस्ल या विचारधारा के आधार पर किसी भी भेदभाव के बिना मानवाधिकारों की गारंटी देता है। नेपाल का संविधान, जिसमें राजशाही के उन्मूलन के बाद से महत्वपूर्ण सुधार हुए हैं, समानता के अधिकार और भेदभाव से मुक्ति सहित मौलिक अधिकारों को सुनिश्चित करता है।

संवैधानिक प्रावधान

i. "अनुच्छेद 11 (1): कानून के समक्ष सभी नागरिक समान होंगे। किसी भी व्यक्ति को कानून के समान संरक्षण से वंचित नहीं किया जाएगा।
ii. अनुच्छेद 11 (2): धर्म, नस्ल, जाति, जनजाति या वैचारिक विश्वास या किसी अन्य आधार पर सामान्य कानूनों के आवेदन में किसी भी नागरिक के खिलाफ कोई भेदभाव नहीं किया जाएगा।
iii. हालांकि, कानूनी सुरक्षा के बावजूद जाति आधारित भेदभाव एक चुनौती बना हुआ है।"[6]

3. भूटान: "भूटान का संविधान 2008 में अपनाया गया था और उसके बाद ही यह एक निरंकुश राजतंत्र से एक लोकतांत्रिक संवैधानिक राजतंत्र में परिवर्तित हुआ।"[7] संविधान का अनुच्छेद 7 कई अधिकारों की स्थापना करता है, जिसमें "अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में समृद्ध कई बुनियादी मानवाधिकार" शामिल हैं, जिन्हें "मानव व्यक्तित्व के विकास और मानव क्षमता की पूर्ण प्राप्ति के लिए आवश्यक" कहा जाता है।"[8] भूटान का संविधान मौलिक अधिकारों की गारंटी देता है, लेकिन देश की अनूठी शासन प्रणाली के कारण राजनीतिक अभिव्यक्ति और स्वतंत्रता पर प्रतिबंध हैं। 2008 में संवैधानिक राजतंत्र में परिवर्तन नागरिक अधिकारों की सुरक्षा में एक महत्वपूर्ण कदम था।

4. मालदीव: "मालदीव के संविधान के अनुसार, "न्यायाधीश स्वतंत्र हैं, और केवल संविधान और कानून के अधीन हैं। ऐसे मामलों पर निर्णय लेते समय, जिन पर संविधान या कानून मौन है, न्यायाधीशों को इस्लामी शरीयत पर विचार करना चाहिए।"[9] मालदीव का संविधान मौलिक अधिकारों का प्रावधान करता है, लेकिन राजनीतिक अस्थिरता और सत्तावादी प्रवृत्तियों ने अक्सर इन सुरक्षाओं को कमज़ोर किया है, खासकर राजनीतिक असंतुष्टों और धार्मिक अल्पसंख्यकों के लिए।

निष्कर्ष

पिछले कुछ वर्षों में दक्षिण एशिया में मानवाधिकारों से जुड़ी कई पहल और विकास सामने आए हैं। ये पहल क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर की गई हैं। हालाँकि, कई चुनौतियाँ मौजूद हैं, जिनकी वजह से इस क्षेत्र में अभी भी दुनिया के किसी भी अन्य क्षेत्र की तरह क्षेत्रीय मानवाधिकार तंत्र का अभाव है। संवैधानिक दृष्टिकोण से दक्षिण एशिया में नागरिक अधिकारों का विकास विविध राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों वाले क्षेत्र में व्यक्तिगत स्वतंत्रता और समानता को साकार करने के वादे और चुनौतियों दोनों को प्रकट करता है। जबकि दक्षिण एशिया में संवैधानिक ग्रंथ आम तौर पर कई प्रकार के नागरिक अधिकारों का प्रावधान करते हैं, इन अधिकारों के कार्यान्वयन को कई कारकों द्वारा आकार दिया गया है, जिसमें राजनीतिक अस्थिरता, सत्तावाद, धार्मिक और जातीय संघर्ष और सामाजिक पदानुक्रमों की दृढ़ता शामिल है। नागरिक अधिकारों के विस्तार में न्यायपालिका की भूमिका महत्वपूर्ण रही है, लेकिन दक्षिण एशिया के कई हिस्सों में पूर्ण समानता और न्याय के लिए संघर्ष जारी है। चूंकि दक्षिण एशियाई देश इन मुद्दों से जूझ रहे हैं, इसलिए संवैधानिक ढांचे इस क्षेत्र में नागरिक अधिकारों के भविष्य को आकार देने में महत्वपूर्ण बने रहेंगे।

संदर्भ

1. https://thearc.org/position-statements/human-civil-rights/
2. https://en.wikipedia.org/wiki/Fundamental_rights_in_India
3. https://www.hurights.or.jp/archives/focus/section2/2001/03/south-asians-for-human-rights.html
4. https://southasianrights.org/?page_id=9066#:~:text=The%20convention%20was%20held%20at,for%20Human%20Rights%20(SAHR).
5. https://www.refworld.org/reference/statepartiesrep/hri/2008/en/63665
6. https://docstore.ohchr.org/SelfServices/FilesHandler.ashx?enc=6QkG1d%2FPPRiCAqhKb7yhsppXB6IanYii4rtzD%2BJCYmgBwQFROUzj%2F2c%2B6XwhA1RnVqpbJbl46vAfs3YkMCosoAY7Wqe%2Fui9%2B9yNaEs9CWO%2FAFDl2gyPxu0JyFSKLaBe5
7. National Assembly of Bhutan, "Constitution of Bhutan", nab.gov.bt.
8. Royal Court of Justice, *A Guide to the Constitution of Bhutan* Archived 2014-12-16 at the Wayback Machine (Judiciary of Bhutan) at 15-16.
9. https://www.hurights.or.jp/archives/focus/section2/2001/03/south-asians-for-human-rights.html